अनुक्रमणिका

क्या	कहां?

खण्ड १

१. श्रमण संस्कृति की रूपरेखा	3
२. जैन मान्यताओं के आरों का संक्षिप्त वर्णणः सृष्टि विकास की कहानी	6
३. जैनधर्म की तीर्थंकर परम्परा : एक विश्लेषण	8
४. आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव	15
५. अन्य तीर्थंकर के विषयों में आवश्यक जानकारी	17

खण्ड २

१. भगवान महावीर : पूर्व भवों का वर्णन	23
२. भगवान महावीरकालीन परिस्थितियां	40
३. महावीर का जन्म-महोत्सव, बचपन, विवाह व संकल्प	45
४. दीक्षा-कल्याणक	63

खण्ड ३

१. साधनाकाल	67

खण्ड ४

१. केवलज्ञान महोत्सव	115
२. गणधर संवाद	120
३. तीर्थं स्थापना	144

खण्ड ५

१. तीर्थंकर महावीर द्वारा धर्म प्रचार	149

खण्ड १

(१) श्रमण संस्कृति की रूपरेखा

(२) जैन मान्यताओं के आरों का संक्षिप्त वर्णन : सृष्टि विकास की कहानी

(३) जैनधर्म की तीर्थंकर परम्परा : एक विश्लेषण

(४) आदितीर्थंकर भगवान ऋषभदेव

(५) अन्य तीर्थंकरों के विषयों में आवश्यक जानकारी (तीर्थंकर चरित्र)

श्रमण संस्कृति की रूपरेखा

संसार में एशिया महाद्वीप बहुत से धर्मों, सभ्यताओं एवं संस्कृतियों की जन्म-भूमि है। एशिया महाद्वीप में भारतवर्ष ही वह पुण्य धरा है, जिसे संसार के चार धर्मों को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त है। ये चार धर्म हैं- (१) वैदिक धर्म (२) जैन धर्म (३) बौद्ध धर्म तथा (४) सिक्ख धर्म।

प्राचीन काल से ही इस धरा पर एक ऐसी संस्कृति पनपी, जो आर्यों के आगमन से पहले इस धरा पर स्थापित हो चुकी थी। इस संस्कृति के संस्थापक व्रात्य, श्रमण, अर्हत्, अर्हं व परमहंस थे। इसका वर्णन संसार की प्राचीनतम पुस्तक ऋग्वेद में ससम्मान हुआ है। ये लोग तपस्या में विश्वास रखते थे। जाति-पाति, अस्पृश्यता, यज्ञ आदि क्रियाकाण्ड, पशुबलि के परम विरोधी थे। ये वर्ण-व्यवस्था में भी विश्वास नहीं रखते थे। तपस्या के अतिरिक्त ये लोग न तो वेद को मानते थे, न ही ब्राह्मण संस्कृति द्वारा स्वीकार किसी अन्य ग्रन्थ को मानते थे। इन लोगों की अपनी परम्परा थी। इनमें दो वर्ग थे- (१) त्यागी श्रमण (महाव्रती) वर्ग, (२) तथा उपासक श्रावक (अणुव्रती) वर्ग। श्रमण परम्परा आत्मा, परमात्मा, पुनर्जन्म, सृष्टि, स्वर्ग, नरक व मोक्ष के बारे में स्वतन्त्र विचारधारा रखती थी। तपस्या, ध्यान द्वारा यह वर्ग आत्मा के स्वरूप का चिन्तवन करते थे।

इतिहासकारों ने इस जाति की विचारधारा को श्रमण संस्कृति का नाम दिया है, जिनके नेता प्रथम धर्म-उन्नायक, विश्व को प्रथम बार कर्म का उपदेश देने वाले तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव थे। तीर्थंकर ऋषभदेव का वर्णन ऋग्वेद के अतिरिक्त भागवतपुराण, श्रीमद् आदि अठारह पुराणों में बहुत ही विस्तार से आया है। इस जाति के कुछ चिन्ह दक्षिण भारत की द्राविड़ जाति में देखे जाते हैं। आर्यों का इनसे प्रथम संघर्ष गंगा-यमुना के किनारे तक हुआ। फिर आर्यों ने इनकी धर्म-संस्कृति को अपनाना शुरू किया। इसी कारण से भगवान ऋषभ को विष्णु व शिव के अवतारों में शामिल कर लिया और उन्हें अपने ढंग से प्रस्तुत किया। भगवान ऋषभदेव ने मानव जाति को स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाया। जैन आगमों के अनुसार उन्होंने पुरुष को ७२ कलाएं व स्त्रियों को ६४ कलाएं प्रदान कर नई सभ्यता को जन्म दिया। इस प्रकार श्रमण संस्कृति में ऋषि व कृषि दोनों साथ-साथ चले। इसके विपरीत आर्य लोग घुमक्कड़ जाति के लोग थे। वह कबीलों में रहते थे। बहुदेववाद में विश्वास करते थे। आत्मा, परमात्मा व पुनर्जन्म के बारे में आर्यों की मान्यता तब तक स्पष्ट न हो सकी थी। इसी कारण वैदिक संस्कृति में कहीं भी, किसी स्तर पर एकरूपता नहीं है। वैदिक संस्कृति एक तरह से ब्राह्मणवाद, यज्ञ, पशुबलि, जातिवाद में विश्वास करती है। वहीं श्रमण संस्कृति इन बातों का विरोध करती है। वैदिक संस्कृति ने षड्दर्शन की दार्शनिक परम्परा को भी जन्म दिया। फिर इसी परम्परा में आगे चलकर अवतारवाद के माध्यम से पुराणों द्वारा ब्राह्मणवाद का खूब प्रसार हुआ। महाभारत, रामायण से लेकर भक्ति परम्परा तक इस धारा की बहुत सी शाखाएं फूटी और विकास को प्राप्त हुईं।

श्रमण संस्कृति के प्राचीन पांच रूप माने गए हैं - (१) जैन (निर्ग्रन्थ), (२) शाक्य (बौद्ध), (३) आजीवक नियतिवादी, (४) गेरुक, तथा (५) तापस। प्रथम दो भाग आज भी जैन व बौद्ध धर्म के नाम से जाने जाते हैं। अन्तिम तीन रूप वैदिक संस्कृति में घुल-मिल गए। श्रमण संस्कृति ने उपनिषद् विचारधारा, गीता, पुराण व सांख्य दर्शन को खूब प्रभावित किया। जिस प्रकार से अहिंसा व करुणा का उपदेश इन

ग्रन्थों में मिलता है, सब पर जैनधर्म का प्रभाव है।

वैदिक धर्म अवतारवाद में विश्वास रखता है। जैनधर्म आत्मा से परमात्मा बनने में विश्वास रखता है। जैनधर्म में अवतारवाद के लिए चाहे कोई स्थान नही, पर धर्म के मामले में एक ठोस मान्यता स्थापित है कि संसार में कभी भी धर्म का अन्त नहीं होता। समय-समय पर हर क्षेत्र में तीर्थंकर जन्म लेते रहते हैं। तीर्थंकर अपने क्षेत्र में और काल में धर्म का संदेश देते हैं।

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में हम सब जीवन यापन करते हैं। इस क्षेत्र में अनेक तीर्थंकरों ने समय समय पर जिनधर्म का उपदेश दिया। महाविदेह क्षेत्र में २० विहरमान तीर्थंकर सदैव विद्यमान रहते हैं।

जैनधर्म : एक स्वतन्त्र व प्राचीन धर्म : आचार्य श्री देवेन्द्र मुनि जी महाराज अपने ग्रन्थ **महावीर एक अनुशीलन** पृष्ठ ७ पर लिखते हैं-

"यह साधिकार कहा जा सकता है कि जैनधर्म विश्व का सबसे प्राचीन धर्म है। यह न तो वैदिक धर्म की शाखा है, न बौद्ध धर्म की। जैनधर्म एक पूर्ण स्वतन्त्र धर्म है। यह सत्य है कि जैनधर्म शब्द का प्रयोग वेदों, त्रिपिटकों व जैन आगमों में नहीं मिलता, जिसके कारण तथा साम्प्रदायिक अभिनिवेश के कारण कितने ही इतिहासकारों ने जैनधर्म को अर्वाचीन मानने की भयंकर भूल की है। हमें उनके ऐतिहासिक ज्ञान पर तरस आता है।"

अपनी बात के प्रमाण में वह श्री लक्ष्मण शास्त्री जोशी का प्रमाण देते हैं, जिन्होंने अपनी पुस्तक **"वैदिक संस्कृति का विकास"** में लिखा है- "जैन व बौद्ध धर्म वैदिक संस्कृति की ही शाखाएं हैं। यद्यपि सामान्य मनुष्य इन्हें वैदिक नहीं मानता। सामान्य मनुष्य की इस भ्रान्त धारणा का कारण है- इन शाखाओं की वेद विरोधी कल्पना। सच तो यह है कि जैनों और बौद्धों की तीन अन्तिम कल्पनाएं- कर्मविपाक, संसार का बंध और मोक्ष या मुक्ति अन्ततोगत्वा वैदिक ही हैं।"

पर शास्त्री जी की ये बातें मूलतः गलत हैं। वेदों में तो आत्मा और मोक्ष की कल्पना तक नहीं। इस संदर्भ में ए.ए.मैक्डोनेल्ड का मत है- "पुनर्जन्म के सिद्धान्त का वेदों में संकेत नहीं मिलता।" पर एक ब्राह्मण ग्रन्थ में यह उक्ति मिलती है-"जो लोग विधिवत् संस्कार आदि नहीं करते, वह मृत्यु के बाद पुनः जन्म लेते हैं और बार-बार मृत्यु का ग्रास बनते हैं।"

वैदिक संस्कृति के तीन मूल तत्त्व हैं- यज्ञ, ब्राह्मण और वर्ण- व्यवस्था। तीनों का जैन व बौद्धों ने विरोध किया है।

डॉ. लासेन ने महात्मा बुद्ध और भगवान महावीर को एक माना है क्योंकि जैन और बौद्ध परम्परा की मान्यताओं में अनेक समानताएं हैं। प्रो. वेबर ने जैनधर्म को बौद्ध धर्म की शाखा बताया है। पर इन सभी गलत धारणाओं का अन्त करने वाले जर्मन के विद्वान प्रो. हर्मन जैकोबी ने जैन व बौद्ध आगमों के आधार पर, तर्कों से सिद्ध किया- "जैन और बौद्ध दोनों स्वतन्त्र धर्म हैं। इतना ही नहीं बल्कि जैनधर्म बौद्ध धर्म से पुराना भी है। ज्ञातपुत्र श्रमण भगवान महावीर इसके अन्तिम प्रचारक (उन्नायक) थे। उनसे २५० वर्ष पहले काशी नरेश राजा अश्वसेन व वामादेवी के पुत्र भगवान पार्श्वनाथ हो चुके थे, जिनका निर्वाण ई.पू. ७७७ पूर्व हुआ था।"

इस तरह प्रो. जैकोबी के बाद किसी भी विद्वान ने जैनधर्म को बौद्धधर्म की एक शाखा बताने का साहस नहीं किया। किन्तु उनकी शिष्य परम्परा के विद्वानों ने बौद्ध ग्रन्थों के संदर्भ से भगवान महावीर का वर्णन प्रस्तुत किया। बौद्ध ग्रन्थों में भगवान पार्श्वनाथ के चातुर्याम का वर्णन इस बात को सिद्ध

करता है कि जैनधर्म महात्मा बुद्ध से पहले संसार में था- स्वयं बुद्ध जीवन के प्रारम्भ में इस परम्परा में दीक्षित हुए थे। उनके चाचा वप्प निर्ग्रन्थ परम्परा को मानते थे।

प्रो. हर्मन जैकोबी ने आगे लिखा है -''इस बात का कोई प्रमाण नहीं कि भगवान पार्श्वनाथ जैनधर्म के संस्थापक थे। जैन परम्परा प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव को ही जैनधर्म का संस्थापक मानने में एक मत है। इस मान्यता में सत्य की संभावना है।''

सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्राप्त कायोत्सर्ग स्थित योगी की प्रतिमा, स्वस्तिक चिन्ह जैनधर्म की प्राचीनता का मुंह बोलता प्रमाण है।

डा. जैकोबी का समर्थन डा. राधाकृष्ण, डा. स्टीवेन्सन और श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने भी किया है।

जैनधर्म के प्राचीन नाम : वेदों, पुराणों में केशी, वातरशना, परमहंस, व्रात्य, अर्हन्, आर्हत, **श्रमण** शब्द जैनधर्म के साधुओं के लिए प्रयुक्त हुए हैं। ऋग्वेद में अर्हन् को विश्व की रक्षा करने वाला कहा गया है।[१] शतपथ ब्राह्मण में ''अर्हन्''का आह्वान किया गया है और उन्हें कई स्थलों पर श्रेष्ठ कहा गया है।[२]

श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने कल्पसूत्र में प्रत्येकबुद्ध को ''अर्हत्'' कहा है।[४]

पद्य-पुराण[५] और विष्णु पुराण[६] में जैनधर्म के लिए ''अर्हत्'' धर्म शब्द प्रयुक्त किया गया है।

भगवान महावीर के समय में जैन के लिए ''निर्ग्रन्थ'' शब्द का व्यवहार होता था। इस बात की पुष्टि जैन तथा बौद्ध साहित्य में हुई है। अशोक के शिलालेखों में ''निग्गंठ'' शब्द मिलता है। वैदिक ग्रन्थों में भी ''निर्ग्रन्थ'' शब्द उपलब्ध है।[७] सातवीं शती में बंगाल में ''निर्ग्रन्थ'' सम्प्रदाय प्रभावशाली होने के काफी प्रमाण हैं। दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और सूत्रकृतांग सूत्रों में जिनशासन, जिनमार्ग, जिनवचन शब्दों का प्रयोग मिलता है।

सर्वप्रथम जैन शब्द का प्रयोग आचार्य जिनभद्र गणि क्षमाश्रमण कृत विशेषावश्यकभाष्य में प्राप्त है।[८] उसके पश्चात् मत्स्यपुराण में जिनधर्म व देवी भागवत हनुमान्नारक में जैनधर्म का उल्लेख हुआ है। जैनधर्म किसी व्यक्ति व देश के नाम से सम्बन्धित नहीं है। यह धर्म अर्हतों का धर्म है। यही जैनधर्म या जिनधर्म है। जैनधर्म में कोई भी व्यक्ति मानव से महामानव बन सकता है। आर्हत धर्म को पद्म पुराण में सर्वश्रेष्ठ धर्म कहा है, जिसके संस्थापक तीर्थंकर ऋषभदेव थे। आर्हत लोग योग, ध्यान में विश्वास कर कर्मबंध और कर्मनिर्जरा को मानते थे। वह अवतारवाद, वेद, ईश्वर को संसार का निर्माण कर्ता नहीं मानते थे।

●●

----

१. ऋग्वेद २/३३/१०, २/३/१/३, ७/१४/२८, १०/२/२, २२/७/१०/८५/४

२. ३/४/१ ३-६, तै. २/४/६/५, तै. आ. ४/५/७, ५/४/१०

३. कल्पसूत्र देवेन्द्रमुनि सम्पादित १६१-१६२

४. ऋषिभाषित १/२६

५. पद्यपुराण १३/३५

६. विष्णुपुराण ३ १८ २

७. कन्थोकोपीनोत्तरा सद्वादीआ येणो से यथाजातरूप धरा निर्ग्रन्थ निष्परिग्रह इति संक्तीतुतियं तैतरीय आरणक भाग २ वृ. ७७८ १०/६६ सायणभाष्य भाग २/७-७८

८. ११७ गाथा-१० पद, सूक्ति १०४५-१०४६।